Sudarshan Research Journal
Volume – 2, Issue - 9, September-2024
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में सांस्कृतिक चित्रण

डॉ. प्रतिमा

अतिथि व्याख्याता, हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग, सोबन सिंह जीना परिसर, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड

किसी भी समाज के स्वरूप को समझने के लिए उसकी संस्कृति को समझना अनिवार्य है। संस्कृति किसी समाज तथा राष्ट्र की आत्मा होती है। मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है; क्योंकि उसके पास अन्य प्राणियों की अपेक्षा सर्वाधिक बुद्धि है। इसी बुद्धि ने मनुष्य को सोचने–समझने की सामर्थ्य दी है और सोचने–समझने की सामर्थ्य ने मनुष्य को कर्मशील बनाया है। फलतः मनुष्य ने अपनी कर्मशीलता के बल पर आदिम अवस्था से लेकर आज तक प्रकृति के सनिध्य में रहकर ज्ञान की विविध दिशाओं में उल्लेखनीय सफलता पाई है और वह आज भी निरंतर क्रियाशील है। वस्तुतः मनुष्य की निरंतर क्रियाशीलता के कारण, उसने भौतिक, आध्यात्मिक उन्नति के साथ–ही–साथ समय–समय पर आचार–व्यवहार का भी खजाना प्राप्त किया है। इसी से मनुष्य की संस्कृति का जन्म हुआ। अतः बुद्धि को ही मनुष्य की संस्कृति का जनक कहा जा सकता है। संस्कृति के दो रूप हैं पहला वह जो भौतिक होने के कारण बाह्य एवं दूसरा वह जो मनुष्य का आचार–व्यवहार होने के कारण आंतरिक भी है। अतः संस्कृति कुछ और नहीं है, बल्कि वह मानव समाज का खानपान, रहन–सहन, आचार–व्यवहार है, जो हमें नित्य दिखाई देता है। शांतिप्रिय द्विवेदी का मानना है कि ''हमारे प्रतिदिन की छोटी–मोटी बातें, खाना–पीना, पहनना–ओढ़ना, चलना–फिरना, हिलना, मिलना, बात–बर्ताव, हाट–बाट, घर–द्वार, झाड़–बुहार, अपनाव–दुराव, साज–सँवार, सेवा–सत्कार, इन्हीं की संस्कारिता में संस्कृति का मूल है।''[1] संस्कृति शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत 'सम्' उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से हुई है। जिसका तात्पर्य परिष्करण, परिमार्जन, रुचिकर बनाना होता है। अर्थात् सम्यक् रूप से किया जाने वाला आचरण ही संस्कृति है। वस्तुतः संस्कृति एक दिन की उपज नहीं होती है, वह पीढ़ी–दर–पीढ़ी से प्राप्त विरासत है; फिर भी उसमें समय–सापेक्ष कुछ–न–कुछ जुड़ता रहता है।

संस्कृति विषयक विचारों से स्पष्ट है कि संस्कृति किसी एक भूखण्ड में रहने वाली मानव जाति की भूत और वर्तमान की वह जीवन पद्धति है जिसमें उसका रहन–सहन, खान–पान से लेकर उसके समस्त प्रकार के आचार–विचार और कार्य व्यापार आ जाते हैं। आधुनिक समय में देश–कालीन परिस्थितियों में परिवर्तन आने के कारण सांस्कृतिक धारणाएं भी प्रभावित हो रही हैं। सांस्कृतिक मूल्यों को तर्क की कसौटी पर कसा जाने लगा है अतः कई परम्परागत मूल्यों को वर्तमान पीढ़ी द्वारा त्याज्य माना जाने लगा है। विज्ञान

Sudarshan Research Journal
Volume – 2, Issue - 9, September-2024
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

के नित नए–नए अविष्कारों का प्रभाव आधुनिक युग पर पड़ है। इन बदलते स्वरूपों को कई रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। रमेशचंद्र शाह हिंदी के समकालीन साहित्यकार हैं। इनके उपन्यासों में कुमाऊँ के आंचलिक जीवन के विविध सांस्कृतिक संदर्भ व्यक्त हुए हैं।

किसी भी स्थान अथवा क्षेत्र की संस्कृति को जानने के लिए कुछ आयाम होते हैं। उनमें संभाषण, खानपान, परिधान, प्रसाधन साम्रगी, संस्कार, पर्व, मेले, लोकरूढ़ियां, लोक विश्वास, लोकगीत आदि प्रमुख आयाम हैं। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में व्यक्त सांस्कृतिक वस्तु संस्कृति के विविध आयामों के अंतर्गत देखी जा सकती हैः–

संभाषण–संभाषण एवं वार्तालाप किसी क्षेत्र एवं वर्ग की संस्कृति का उद्घाटन करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक होता है; क्योंकि अभिव्यक्ति ही वह माध्यम है जो लोगों के विविध क्षेत्रों एवं वर्गों से संबद्ध जीवन की संस्कृति को व्यक्त करता है। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों के अंतर्गत कुमाऊँ के ग्राम्य और कस्बाई जीवन का चित्रण हुआ है। फलतः इनके उपन्यासों के विविध क्षेत्रों एवं वर्गों से संबद्ध चरित्रों के संभाषणों के द्वारा सांस्कृतिक संदर्भ प्रकृत रूप में व्यक्त हुए हैं। इनके उपन्यासों के संबंध में सर्वाधिक उल्लेखनीय बात यह है कि इनके उपन्यास साहित्य के केंद्र में मध्यम एवं निम्न वर्ग को सर्वाधिक चित्रित होने का अवसर मिलता है। अतः इनके उपन्यासों में मध्यम वर्ग के सांस्कृतिक सरोकार सर्वाधिक चित्रित हुए हैं।

रमेशचंद्र शाह के 'गोबर गणेश', 'किस्सा गुलाम', 'सफेद परदे पर', 'पूर्वापर', 'पुनर्वास', 'विनायक', 'असबाब–ए–वीरानी', 'कम्बख़्त इस मोड़ पर', 'कथा सनातन' आदि उपन्यासों में कुमाऊँ अंचल की संस्कृति गहरी रची–बसी है; क्योंकि इन उपन्यासों के अधिकांश चरित्र कुमाऊँ अंचल से संबद्ध हैं। अतः इन चरित्रों के वार्तालापों के माध्यम से कुमाऊँ की संस्कृति का उद्घाटन हुआ है। जिनके द्वारा कुमाऊँ अंचल की संस्कृति व्यक्त हुई है। मोहनदा के और गणेशी चाचा के संभाषण द्वारा कुमाऊँ अंचल की संस्कृति को देखा जा सकता हैः''जगन्नाथ बेटा! क्या पता मैं रामलीला तक बचूं। तू मझे आज सुना ही दे वो गीत बेटा, जिसे सुनके पत्थर भी रो देता है न.....'कोई' तो बता दे जल नीर, सिया प्यासी है।''

सब लोग हक्के–बक्के रह गए। गणेशी चाचा हड़बड़ाकर उठे और मोहनदा के पास जाकर समझाने लगे, कैसी बात करते हो मोहनदा! अभी–अभी अच्छी खासी होली खुद ही सुना रहे थे, अभी–अभी तुमको यह कैसी मति आ गई? होली में रामलीला का गाना अच्छा लगता है ऐसा तो न कभी देखा न सुना, क्यों भगवान द्दा! यह तो बहुत ही अपशकुनी बात है।''[2] विनायक उपन्यास के विनायक और लच्छू के वार्तालाप से भी कुमाउनी संस्कृति व्यक्त हुई हैः ''क्यों? क्या हुआ लच्छू? अधरात के छल जैसा तू.....।''

'स्नोफॉल बीनू, स्नोफॉल, तू देखना चाहता था ना? आया क्यों नहीं? मुझे पता है विंटर वैकेशन होती हैं दस दिन की सब जगे। तेरे यहां भी होगी। त्रिभुवन से बात हुई होगी–उसने नहीं कहा तुझसे? वह तो

Sudarshan Research Journal
Volume – 2, Issue - 9, September-2024
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

कह रहा था तू भौजी के साथ आने का बना रहा है। झूठ क्यों बोला उससे? ''अरे यार, मन तो था..... मगर, मन से क्या होता है! यहां किसी को फुरसत नहीं सर्दी में पहाड़ के नाम से ही कँपकँपी छूटती है इनको गर्मियों में आएंगे यार पक्का...सुन यार, मैं स्नोफॉल देखने तो नहीं आ सकता। मगर इस बरस की शिवरात्रि और होली मैं बाल–बच्चों के साथ वहीं बिताना चाहता हूँ।''[3] कमब्खत इस मोड़ पर उपन्यास में कथानायक एकालाप करते हुए कहता है:.''हम पहाड़ी लोगों को चालीस–पचास बरस पहले घटी घटनाओं को भी 'अभी–परसों' की ही बात कहने की आदत है।''[4]

खान–पान–सांस्कृतिक संदर्भों के अंतर्गत खान–पान को भी सम्मिलित किया जाता है। जिस प्रकार अंचलवासी रहन–सहन एवं वेशभूषा में अन्य से विशिष्ट होते हैं, उसी प्रकार खान–पान में भी वे अपने आप में औरों से पृथक् दिखाई देते हैं। वस्तुतः खानपान किसी क्षेत्र की संस्कृति को जानने का प्रमुख आयाम होता है। यह एक ऐसा सांस्कृतिक पक्ष है जिसके द्वारा हमें क्षेत्र एवं वर्ग विशेष की संस्कृति का परिचय मिलता है। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में खानपान के अंतर्गत कुमाउनी संस्कृति का चित्रण हुआ है।

रमेशचंद्र शाह के 'गोबर गणेश' उपन्यास में शिमला मिर्च, दही और सूजी के पुए, ''आलू उबले रखे हैं। अभी छौंक देता हूँ, 'बणा यार, बणा जल्दी से, 'किस्सा गुलाम' उपन्यास में डुबके''; , मडुवे की काली रोटी और मादिरे का भात,'बासी मडुवे की रोटी और मादिरे का भात, बेसन के लड्डू, खोए की जलेबी, मेथी का साग; 'विनायक' उपन्यास में खान–पान के माध्यम से गहरी आंचलिकता व्यक्त हुई है: ''माँ थाली में गुड़ बिछाके छत पर ताजी आइसक्रीम '', ''गब के साथ ठठवाणी भात'' आदि खान–पान से कुमाउनी संस्कृति व्यक्त हुई है।

परिधान–परिधान व्यक्ति की संस्कृति का महत्वपूर्ण आयाम है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने समाज, वर्ग, क्षेत्र, अंचल से जुड़ी हुई संस्कृति को दर्शाता है। व्यक्ति जिस क्षेत्र एवं वर्ग से संबद्ध होता है, उसी क्षेत्र एवं वर्ग के अनुरूप उसकी वेशभूषा भी होती है। परिधान के द्वारा भी किसी क्षेत्र एवं वर्ग के सांस्कृतिक सरोकारों का उद्घाटन होता है; क्योंकि क्षेत्र एवं वर्ग के आधार पर वेशभूषा में स्वतः परिवर्तन परिलक्षित होता है। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में कुमाऊँ अंचल से लेकर नगरीय एवं महानगरीय संस्कृति को उद्घाटित करने वाले परिधान व्यक्त हुए हैं। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में कुमाऊँ अंचल से लेकर कस्बाई एवं नगरीय जीवन से संबद्ध स्त्री एवं पुरुष परिधानों का निरूपण हुआ है। रमेशंचद्र शाह के उपन्यासों में स्त्री परिधानों का चित्रण कम देखने को मिलता है। 'पुनर्वास' उपन्यास में साड़ी, शाल, कार्डिगन स्त्री परिधान आए हैं। स्त्रियों की भांति पुरुष भी अपने पहनावे के कारण अपनी अलग पहचान रखता है और पुरुष परिधान के द्वारा क्षेत्र एवं वर्ग विशेष की संस्कृति का उद्घाटन होता है। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में कुमाऊँ अंचल से लेकर नगरीय एवं महानगरीय पुरुष परिधान व्यक्त हुए हैं।

Sudarshan Research Journal
Volume – 2, Issue - 9, September-2024
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

रमेशचंद्र शाह के 'गोबर गणेश' उपन्यास में पीले रेशम की धोती, पीली जनेऊ, मलेशिया की कमीज, सफेद वर्दी, खाकी जीन की पैंट; 'पूर्वापर' उपन्यास में काली कमली; 'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू' उपन्यास में मैरून रंग का स्वेटर, हल्के बादामी रंग का सूट आदि परिधान आए हैं।

प्रसाधन सामग्री–प्रसाधन सामग्री से अभिप्राय शृंगार या सजावट के सामान से है। किसी व्यक्ति अर्थात् महिला या पुरुष को सजाने एवं उसके रूप को बढ़ाने के लिए जिस सामग्री का प्रयोग किया जाता है, उसे प्रसाधन सामग्री कहा जाता है। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में प्रसाधन सामग्री भी प्रयुक्त हुई है। रमेशचंद्र शाह के गोबर गणेश उपन्यास में पहुचियां स्त्री प्रसाधन सामग्री आई है। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में पुरुष प्रसाधन सामग्री का अभाव है।

संस्कार–संस्कार किसी भी क्षेत्र एवं वर्ग की सांस्कृतिक पहचान के महत्वपूर्ण आयाम हैं; क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र, वर्ग संप्रदाय के अपने अलग–अलग संस्कार होते हैं और इन संस्कारों के द्वारा उस क्षेत्र के सांस्कृतिक संदर्भ व्यक्त होते हैं। रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में कुमाऊँ अंचल के कतिपय संस्कारों का उद्घाटन हुआ है। रमेशचंद्र शाह के गोबर गणेश उपन्यास में व्रतबंध और विवाह आदि संस्कार आए हैं: ''केले के पत्तों और रेशम के कपड़ों के बीच में वेदी बनाई गई थी, हवन हुआ था। क्या बढ़िया घी की खुशबू उड़ रही थी। पुरोहित जमनादत्त त्याड़ीजी एक चौकी पर बैठे थे, सामने दूसरी चौकी पर भाई। जमनादत्त जी श्लोक बांच रहे थे, भाई के हाथ से सिक्के पर सिक्के निछावर किए जा रहे थे। एक लाल रेशम के बिछे हुए वस्त्र पर ...हर आठ–दस श्लोक पर एक सिक्का....फिर वे सारे सिक्के जमनादत्त जी समेटकर ले गए थे। उसके बाद एक बड़ा भारी तराजू टोकरियों का आंगन के बीचोबीच लटकाया गया था। एक पलड़े पर भाई को बैठाया गया था और दूसरे में गेहूँ, चावल, दाल, कपड़े, मेवे, फल और जाने क्या–क्या अल्लम–गल्लम ठंसा हुआ था. .....जब पलड़े बराबर आ गए तो दूसरे पलड़े की सारी चीजें जमनादत्तजी को दे दी गई थी।'' 'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू' उपन्यास में अंत्येष्टि संस्कार के साथ–साथ अन्य कई संस्कारों का निरूपण हुआ है :''अरे, जिस आदमी को कभी किसी शादी या जनेऊ या जन्मदिन की पार्टी में किसी ने न देखा हो–यहाँ तक कि होली–दिवाली जैसे मौकों पर भी जो किसी से मिलता–जुलता न हो वह अचानक इस कदर सामाजिक हो उठे वह भी मुरदा फूंकने के मामले में तो उन्हें हैरत न हो, तो क्या हो! खुद मुझी को हैरत होती है अपने आप पर। क्या कोई यकीन करेगा इस बात पर कि मैं इससे पहले कभी किसी की शव यात्रा में शामिल नहीं हुआ? चिता तक नहीं देखी मैंने कभी किसी की। अपने माता–पिता तक की अंत्येष्टि में शामिल नहीं हो सका था। ''[6] रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में कुमाऊँ में प्रचलित संस्कारों का बड़ा सजीव चित्रण हुआ है।

पर्व–लोक संस्कृति के वास्तविक दर्शन लोक जीवन में व्याप्त तीज–त्यौहारों तथा पर्वोत्सव द्वारा किए जा सकते हैं। लोक जीवन में इसका विशेष महत्व होता है। पर्व किसी क्षेत्र एवं वर्ग के सांस्कृतिक आयाम होते हैं। पर्व या उत्सव के द्वारा किसी भी क्षेत्र की उच्च, मध्यम एवं निम्न वर्ग के लोगों की संस्कृति का ज्ञान

Sudarshan Research Journal
Volume – 2, Issue - 9, September-2024
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

होता है। यह संस्कृति जीवन का अभिन्न अंग होती है। हर्ष, उल्लास और मनोरंजन के साथ–साथ इसमें आमोद–प्रमोद का भाव भी विद्यमान रहता है। तीज त्यौहारों के माध्यम से क्षेत्रीय जीवन और उसमें मानव जीवन की विभिन्न अनुभूतियां, लोक व्यवहार, सामाजिक मूल्य, विचार , धर्म, अंधविश्वास, लोकाचार व्यक्त होते हैं। तिथिवार मनाए जाने के कारण इन्हें त्यौहार कहा जाता है। सामान्यतः पांच तिथियों के अंतर में पड़ने वाले प्रतिपदा को पर्व कहा जाता है। किंतु दोनों में अंतर हैः ''जिन तिथियों में स्नानादि कर्म संपन्न होते हैं, वे पर्व कहलाते हैं और जिनमें आमोद–प्रमोद और हर्षोल्लास व्यक्त किया जाता है वे उत्सव कहे जाते हैं।''[7]

रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में कुमाऊँ अंचल के तीनों वर्गों से संबद्ध जीवन का चित्रण हुआ है। रमेशचंद्र शाह के 'गोबर गणेश' उपन्यास में होली का चित्रण हुआ हैः ''सरोज दीदी गोबर मिट्टी लेके चीर मैया की एक कुहनी पर थोप देती हैं। माँ भीतर से एक जलता हुआ मिट्टी का दीया आंचल की ओर करके ला रही हैं। सरोज दीदी माँ के हाथ से दीया लेकर उस जगह जमा देती है। दीये की लौ नाच रही है झुरमुट में।''[8] इसके अलावा विनायक अपने दोस्तों के साथ खतडुवा मानने की बात करता चित्रित हैः अच्छा भई, कल अपन मिल रहे हैं न 'भेल्लो खतडुआ' मनाता चित्रित हुआ है।''

इस उपन्यास में होली पर्व के निरूपण द्वारा कुमाउनी लोक संस्कृति की झलक मिलती है। इसमें कुमाऊँ में होने वाली बैठकी होली का चित्रण हुआ हैः ''आजकल जगह–जगह बैठकी होलियां चल रही हैं। कभी किसी के यहां, कभी किसी के यहां जगन काका उन्हीं में मस्त रहते हैं। रात बारह–एक बजे से पहले नहीं लौटते बसंत पंचमी के बाद बैठकी होलियां शुरू हो जाती है।''[10]''विनायक' उपन्यास में कथानक विनायक के द्वारा कुमाऊँ अंचल में मनाए जाने वाले विभिन्न पर्वों का उद्घाटन हुआ हैः ''इस साल शिवरात्रि होली में, अगले साल बरसात में जब जन्माष्टमी और खतडुवा और नंदादेवी का मेला लगता है, फिर उसके अगले साल इन्हें वहां का नवरात्र करवा देंगे, रामलीला दिखा देंगे। गाँव की भी, शहर अल्मोड़ा और रानीखेत की भी फिर चंदू, अगले साल की दीवाली हम वहीं मनाएंगे। यार ऐसा है, अपने पास तो फुरसत है।''[11]यह पर्व त्योहार लोगों के आपसी संबंधों को मजबूत करने का माध्यम बनते हैं, क्योंकि इनमें सम्मलित लोग आपसी ईर्ष्या–द्वेष मिटाकर इकट्ठे होकर इनको मनाते हैं और ये सामाजिक संरचना में संबंधों को मजबूत करने का कार्य करते हैं।

मेले–लोक जीवन में मेलों का विशेष महत्व होता है। मेले किसी क्षेत्र, वर्ग के सांस्कृतिक आयाम होते हैं। मेलों के द्वारा तीनों वर्गो उच्च, मध्यम एवं निम्न वर्ग के लोगों की संस्कृति अभिव्यक्त होती है। यह संस्कृति जीवन का अभिन्न अंग है। हर्ष, उल्लास और मनोरंजन के साथ–साथ इसमें संस्कृति का भाव भी विद्यमान रहता है। मेलों के माध्यम से क्षेत्रीय जीवन और इसमें मानव जीवन की विभिन्न अनुभूतियों, लोक व्यवहार, सामाजिक मूल्यों, धार्मिक प्रतिमाओं, विचारों, धर्म, अंधविश्वास लोकाचारों आदि के युगों–युगों से संचित स्तर सन्निहित रहते हैं। मेले आमोद–प्रमोद और हर्षोल्लास के साधन होते हैं।

Sudarshan Research Journal
Volume – 2, Issue - 9, September-2024
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में आंचलिक मेलों का उद्घाटन हुआ है। इनके 'गोबर गणेश', 'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू', 'विनायक' आदि उपन्यासों में मेलों का चित्रण हुआ है। इनके 'गोबर गणेश' उपन्यास में नन्दादेवी के मेले का चित्रण हुआ है: ''नन्दादेवी के मेले का दिन है। बाजार में रेलमपेल मची है। एक रेला नाचते गाते आदमियों का उमड़कर आता है। एक हाथ में रंगीन रेशम का रूमाल, दूसरे में आईना....पीछे–पीछे तीन हट्टे–कट्टे लोग एक भैंसे को जंजीर से घसीटते हुए ला रहे हैं।''

इनके 'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू' उपन्यास में उत्तरायणी के मेले का चित्रण हुआ है। जो बागेश्वर जिले में प्रतिवर्ष चौदह जनवरी से शुरू होकर लगभग एक हफ्ते तक चलता है। सरयू गोमती संगम पर बसे बागेश्वर शहर में प्रतिवर्ष इस मेले का आयोजन किया जाता है। यहां बाबा बागनाथ का प्रसिद्ध मंदिर है। श्रद्धालु बाबा बागनाथ के दर्शन करने एवं मेले का आनन्द उठाने पहुँचते हैं: ''उत्तरायणी का मेला!.....पहाड़ पर पहाड़ लाँघते, एक पहाड़ के पीछे से उगते सूरज उगाते और दूसरे पहाड़ के पीछे उसी सूरज को सिराते पिता।....'थक तो नहीं गया विभू? वो देख, वो रहा बागेश्वर। बस अब उतार ही उतार है बेटा'....''

इसके अलावा 'विनायक' उपन्यास में नन्दादेवी मेले का नाम आया है। 'विनायक' उपन्यास का कथानायक अपने गांव जाकर अपने बच्चों को स्थानीय मेले दिखाना चाहता है: ''इस साल शिवरात्रि–होली में, अगले साल बरसात में जब जन्माष्टमी खतडुवा और नंदादेवी का मेला लगता है, फिर उसके अगले साल इन्हें वहां का नवरात्र करवा देंगे।'' रमेशचंद्र शाह ने अपने उपन्यासों में कुमाऊँ क्षेत्र के स्थानीय मेलों का चित्रण किया है जिससे कुमाऊँ की लोक संस्कृति व्यक्त होती है।

लोक रूढ़ियाँ–समाज में प्रचलित लोकरूढ़ियों के माध्यम से भी संस्कृति का उद्घाटन होता है। समकालीन हिंदी उपन्यासकारों ने उपन्यासों में अपने अंचल से संबद्ध लोकरूढ़ियों का पर्याप्त उपयोग किया है। वस्तुतः उपन्यासकार सामाजिक विडंबनाओं समस्याओं एवं विकृतियों के उद्घाटन के लिए लोक में प्रचलित रूढ़ियों का उपयोग करता है। रमेशचंद्र शाह ने अपने अंचल के ग्राम्य जीवन से लेकर नगरीय जीवन संदर्भों को उपन्यासों की वस्तु बनाया है। अतः इनके उपन्यासों में लोक रूढ़ियाँ स्वतः व्यक्त हो गई हैं।

इस दृष्टि से रमेशचंद्र शाह के 'गोबर गणेश', 'किस्सा गुलाम', 'सफेद परदे पर', 'पूर्वापर', 'पुनर्वास', 'आखिरी दिन', 'कम्बख्त इस मोड़ पर', 'कथा सनातन' उपन्यास महत्वपूर्ण हैं। इनका 'गोबर गणेश' उपन्यास तो लोक रूढ़ियों की दृष्टि से महत्वपूर्ण है; क्योंकि इस उपन्यास के मध्यमवर्गीय कस्बाई जीवन से संबद्ध चरित्र लोकरूढ़ियों में डूबे दिखाई देते हैं। इस उपन्यास का विनायक उसके माता–पिता, बहन सरोज, मथुर काका आदि चरित्रों में लोक रूढ़ियाँ बराबर दिखाई देती हैं। इस उपन्यास के आरम्भ में लोक रूढ़ियों को व्यक्त करने वाला एक उदाहरण दृष्टव्य है जिसमें कथानायक विनायक परंपरा से प्राप्त संस्कार के रूप में भारतीय समाज में रूढ़ियों का पालन करता दिखाई देता है: ''नंदादेवी को इक्कीस भैसों की और सैकड़ों

Sudarshan Research Journal
Volume – 2, Issue - 9, September-2024
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

बकरों की बलि चढ़ती है। मां सुना रही है नंदादेवी की कथा, देवी के रूप पर एक असुर मोहित हो गया और उनके पीछे दौड़ा देवी भागकर एक केले के झुरमुट में छिप गई। उनको छिपते हुए देख लिया एक भैंसे ने। इसलिए हर साल देवी को भैसों की बलि दी जाती है। तभी वे प्रसन्न होती हैं।'' कथानायक का पिता गहरी रूढ़िवादिता के कारण अपनी पुत्री के ससुराल में अन्न जल ग्रहण नहीं करना चाहता हैः ''मैं वैसे भी ये अच्छी भी होती तो भी मैं कैसे रुक सकता था। मैं ठहरा पुराने जमाने का आदमी आप तो जानती ही हैं। पुरखों की रस्म है कि लड़की के घर का पिता ग्रहण नहीं कर सकता।'' इनके 'आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू' उपन्यास में छीक को अपशकुन मानने की रूढ़िवादिता व्यक्त हुई हैः ''जब तीन मील दूर बाजार तक इन्हें ढोने के बाद कुछ पैसे मिलेंगे इन्हें बेचकर और तुमने ऐन गट्ठर बांधते वक्त हमारे मुँह पर छींक दिया। और जगह नहीं मिली तुम्हें छीकने को?''

लोकगीत–लोकगीत मानव जीवन की अनुभूत अभिव्यक्ति और हृदयोद्गार हैं तथा जीवन का स्वच्छ और साफ दर्पण भी है, जिसमें समाज के व्यक्त जीवन का प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है। लोकगीत ही लोकजीवन की वास्तविक भावनाओं को प्रस्तुत करते हैं। इसमें मनुष्य मात्र के पारिवारिक और सामाजिक जीवन का सामयिक तथा भावनात्मक चित्रण रहता है। जीवन के सभी पहलुओं एवं विभिन्न परिस्थितियों में मनुष्य के मानसिक एवं शारीरिक व्यापार जैसे होते हैं, उनका यथातथ्य चित्रण लोकगीत में मिलता है।

रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में कुमाऊँ में प्रचलित लोकगीत प्रयुक्त हुए हैं। रमेशचंद्र शाह के गोबर गणेश उपन्यास में गिदारियों द्वारा विनायक के जन्मदिन पर मंगलगीत (शकुनाखर) गाया जाता हैः ''शकूना दे शकूना दे, काज ये अती नीको सो, रँगीलो पाटलो आँचली कमलो को फूल....'' इसी उपन्यास में विनायक अपनी बहन द्वारा गाए गए गीत को याद करता हैः–

''फूली गेछ दैणा नरैण।

ऐगै रितू रैणा

कफुवा बासण लागो हो मेरी बैणा

ऐगै रितू रैणा

खेतों में सरसों फूल गई। कफुवा पक्षी का स्वर भी वनों में गूंजने लगा। तेरा भाई तुझे लिवाने आया है ओ मेरी बहन!''[19]

सरोज आर्य कन्या पाठशाला के सालाना जलसे में लोकगीत गाती चित्रित हुई है :– ''छाना बिलौरी झन दिया बौज्यू।

लागला बिलौरी का घामा.....(हे पिता! और चाहे जो कुछ करना, पर मुझे, छाना–बिलौरी जैसी गरम घाटियों को मत देना। वहाँ की धूप देह और आत्मा को झुलसा देने वाली होती है पिता! मुझे भूलकर भी वहां मत ब्याहाना।''[20] रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में जहां एक ओर कुमाऊँ अंचल की संस्कृति को साकार रूप में प्रस्तुत किया गया है,

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों की सांस्कृतिक वस्तु विस्तृत एवं व्यापक जीवन संदर्भों के वाहक हैं; क्योंकि रमेशचंद्र शाह के उपन्यासों में विभिन्न वर्गों के रहन–सहन, खान–पान, रीति–रिवाज, रूढियों, उत्सव, पर्व एवं मेलों के माध्यम से कुमाउंनी संस्कृति को चित्रित होने का अवसर मिला है। इनके उपन्यासों में आंचलिक संस्कृति विशेष रूप से आई है। वहीं पात्रों द्वारा रूढ़िवादी संस्कृति का चित्रण हुआ है। अतः कहा जा सकता है कि रमेशचंद्र शाह के उपन्यास साहित्य में संस्कृति के विभिन्न आयामों द्वारा कुमाउनी संस्कृति का व्यापक चित्रण हुआ है।

संदर्भ :–

I. द्विवेदी शांतिप्रिय : रचना संचयन, पृ0 510
II. शाह रमेशचंद्र; गोबर गणेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977, पृ0113
III. शाह रमेशचंद्र; विनायक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,2010 पृ039
IV. शाह रमेशचंद्र; कम्बख़्त इस मोड़ पर, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2007 पृ018
V. शाह रमेशचंद्र; गोबर गणेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977, पृ0 29
VI. शाह रमेशचंद्र; आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर,2001, पृ019
VII. पोखरिया डॉ0 देव सिहं; कुमाउनी संस्कृति, अल्मोड़ा बुक डिपो, 2000,पृ029
VIII. शाह रमेशचंद्र, गोबर गणेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977, ; 110
IX. शाह रमेशचंद्र; गोबर गणेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977,पृ0159
X. वही, पृ087
XI. शाह रमेशचंद्र; विनायक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,2010,पृ0 40
XII. शाह रमेशचंद्र; गोबर गणेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977, पृ0119
XIII. शाह रमेशचंद्र; आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर,2001, पृ0103
XIV. शाह रमेशचंद्र; विनायक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,2010,पृ040
XV. शाह रमेशचंद्र; गोबर गणेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977, पृ0119
XVI. वही, पृ0 322
XVII. शाह रमेशचंद्र; आप कहीं नहीं रहते विभूति बाबू, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर,2001, पृ041
XVIII. शाह रमेशचंद्र; गोबर गणेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1977, पृ070

XIX. वही, पृ0319

XX. वही, पृ0320